योग की ज्ञानमीमांसा पर कुछ विचार

नी० र० वन्हाड पाँडे

महर्षि पतंजली का योगदर्शन दर्शन के विद्यार्थियों के लिये सब से जटिल ग्रन्थ है। इस का प्रधान कारण यह है कि इसके सिद्धांत केवल वाचन और विचार से समझ में नहीं आ सकते, उस के लिये स्वयं प्रयोग करने की आवश्यकता है। कोई अभ्यासक ऐसा प्रयोग करने के लिये सिद्ध हो भी जाय तो भी केवल योग दर्शन पढ़ने से प्रयोग किस तरह किया जाय, इसके बारे में पर्याप्त सूचनाएं और मार्ग दर्शन नहीं मिलता। जो लोग योगी कहलाते हैं उन में भी योग साधनों के बारे में बहुत मतभेद है। इन सब कारणों से यहां योगदर्शन का जो विवेचन किया जायगा वह शायद पाठकों को अधूरा लगेगा। परन्तु केवल अधिकृत ग्रन्थ पढ़ कर योग के बारे में यदि कुछ ज्ञात हो सकता है तो उसको पाठकों के सामने रखना व्यर्थ न होगा।

पुरुष, अर्थात् आत्मा, वस्तुतः प्रकृति से भिन्न है, वह भ्रमवशात् स्वयं को प्रकृति में फँसा लेता है। वह भ्रम दूर होकर जब वह फिर से प्रकृति से अलग हो जाता है तब उसका कैवल्य स्थापित होता है। कैवल्य से सभी दुःखों का नाश हो जाता है।[1] इस कैवल्य को प्राप्त करने का साधन ही योग है।

चित्त जब सत्य ज्ञान प्राप्त करता है तब उसकी वृत्ति को प्रमाण कहते हैं, और जब मिथ्या ज्ञान प्राप्त करता है तब उस को विपर्यय कहते हैं। विकल्प अर्थात् कल्पना, निद्रा और स्मृति इनके अर्थ स्पष्ट हैं।

यहां शंका उत्पन्न होती है कि निद्रा को वृत्ति क्यों माना गया। निद्रा में तो कोई अनुभव नहीं होता। इस पर योग का उत्तर है कि निद्रा में भी अभाव का अनुभव होता[2] है। "मुझे कोई भी अनुभव नहीं है" यह प्रतीति भी अनुभव की ही अवस्था है। अगर निद्रा में कोई भी अनुभव न हो तो जागने के बाद 'मैं सुख से सोया था' 'सुखमहमस्वाप्स्यम्' ऐसा अनुभव नहीं हो सकता। यह अनुभव स्मृति रूप है और जो अनुभव उत्पन्न ही नहीं हुआ उसकी स्मृति नहीं हो सकती।

चित्त की ये वृत्तियां क्लेशपूर्ण या क्लेशरहित हो सकती[3] हैं। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेश और अभिनिवेश, ये क्लेश[4] हैं। अनित्य को नित्य समझना, और अनात्मा को आत्मा

---

१. ततःक्लेशकर्म निवृत्तिः। योगदर्शन, कैवल्यपाद, सूत्र ३०।

२. अभावप्रत्ययालम्बना वृत्तिर्निद्रा। योगदर्शन, समाधिपाद, सूत्र १०

३. योगदर्शन, समाधिपाद सूत्र ४

४. यो. द. स० पा० सू० ३

समझना, यह अविद्या है।[1] वस्तुतः सांख्ययोग के मुताबिक आत्मा को अनात्मा समझने से ही बाकी भ्रांतियां होती हैं, इस लिये यही अविद्या का असली रूप है। आत्मा खुद के स्वरूप को जान ले तो अनित्य को नित्य समझने का प्रमाद न होगा। जड़ पदार्थों के समान चित्त भी अनात्मा है। चित्त को आत्मा समझना यह अस्मिता है।[2] राग और द्वेष के अर्थ स्पष्ट ही हैं। शोपेनहोर, जिसको (will to live) कहता है, वही 'जीने की इच्छा' अभिनिवेश है।[3] सारांश, मैं, मेरा इत्यदि भावनाओं की वजह से जो सुख दुःखों का अनुभव होता है, उसी को योगदर्शन में क्लेश कहा गया है। आत्मा चित्त से अलग है, यह ज्ञान होने से पहले चित्त वृत्तियां क्लेशपूर्ण रहती हैं। यह ज्ञान होने के बाद वही क्लेश रहित हो जाती हैं। कैवल्य पाने वाला व्यक्ति भी आँखों से देखता है। उसको भी राज्जू की जगह पर सर्प का भ्रम हो सकता है, वह भी सोता है और स्मरण करता है। परन्तु वह सब तटस्थ रूप से करता है। उसके इन अनुभवों में राग, द्वेष और जीने की इच्छा आदि क्लेश नहीं रहते। खुद की लड़की को ससुराल भेजते समय वियोग का दुख होता है, नाटक में शकुन्तला के ससुराल जाने का दृश्य देखने पर भी दुःख होता है, परन्तु पहला दुःख वास्तविक दुःख है और दूसरा दुःख का आभास होने से कारण रस कहलाता है। कहा जा सकता है कि नाटक के दृश्य देखने वालों की चित्त–वृत्तियों में क्लेश नहीं रहता। इसी प्रकार कैवल्यशाली पुरुष संसार के अनुभवों को अनात्मा के रूप में देखता है। अतः संसारानुभव में उसकी चित्त वृत्तियां क्लेश रहित रहती हैं।

समाधिः-

यद्यपि कैवल्य प्राप्त होने पर चित्तवृत्तियां क्लेश रहित हो जाती हैं, उनका निरोध किये बिना कैवल्य प्राप्त नहीं होता। योग यही बताता है कि चित्तवृत्तियों का निरोध कैसे करना है। "योगश्चित्त वृत्ति निरोध"![4]

चित्तवृत्तियों का निरोध करने के लिये अभ्यास और वैराग्य इनकी जरूरत है। चित्त को स्थिर रखने का प्रयत्न अभ्यास कहलाता[5] है। किसी भी विषय पर चित्त एकाग्र होने से वह स्थिर होता है। परन्तु इस स्थिरता में किसी विषय का भान रहता है। जब चित्त को किसी भी विषय का भान नहीं रहता है और फिर भी वह स्थिर रहता है तब उस अवस्था को निरूद्ध अवस्था कहते हैं। एकाग्र और निरूद्ध यह दो अवस्थाएं सम्प्रज्ञात और असम्प्रज्ञात समाधि इन नामों से भी प्रसिद्ध हैं।

इस पर स्वाभाविक यह प्रश्न उठता है कि असम्प्रज्ञातसमाधि में अगर किसी विषय का ज्ञान नहीं होता तो इस समाधि में और स्वप्न रहित निद्रा में क्या फरक है? इस प्रश्न पर योग का उत्तर यह है कि समाधि सत्वगुण के उत्कर्ष से होती है, परन्तु निद्रा तमोगुण के उत्कर्ष से

---

१. वी. द्र. सा. पा. सूत्र ५ २. यो. द. सा. पा. सूत्र ६
३. यो. द. सा. पा. सूत्र ६ ३. यो. द. सा. पा. सूत्र ११
५. यो. द. सा. पा. सूत्र १३

योगशास्त्र की परिभाषा में निद्रा में चित्त की अवस्था मूढ़ कहलाती है।

समाधि की अवस्था निद्रा के समान है या नहीं, इसका निश्चय करने के लिये आधुनिक मनोविज्ञान ने भी कुछ प्रयोग किये हैं। मस्तिष्क विद्युल्लेखक (electro encephe-lo gram) नाम का एक यन्त्र है। इस यन्त्र से मस्तिष्क में जो विद्युत्प्रवाह चलते हैं उनका नक्शा खींचा जा सकता है। दास (कलकत्ता) और गेस्टांट (मार्सेलिस) इन मनोवैज्ञानिकों ने ध्यान और समाधि की अवस्थाओं में मस्तिष्क के विद्युत्प्रवाहों का चित्रण किया। ध्यान में किसी एक विषय पर पूर्णतया चित्त एकाग्र हो कर रहता है। इस अवस्था में मस्तिष्क के विद्युत्प्रवाह में हरेक सेकन्ड में ८ से १५ तक लहरें उठती हैं। मनोविज्ञान की परिभाषा में इसको alpha rythem कहते हैं। इसके बाद मस्तिष्क के (Rolandic) भाग में हर सेकन्ड में १८ से ४० तक लहरें दिखाने वाला विद्युत्प्रवाह दिखाई देता है। इसको (Beta Rythem) कहते हैं। समाधि की अवस्था में ऐसीही शीघ्र लहरें चलती हैं। इन लहरों की विद्युच्छक्ति भी ६०से लेकर १०० Microvolts तक बढ़ जाती है। जब समाधि उतरकर फिर स्थान की अवस्था आ जाती है तब फिर से (Alpha Rythem) दिखाई देता है। परन्तु यह सेकन्ड में ७ या ८ लहरों वाली हलकी रहती है।

एकाग्रता:-

मस्तिष्क के विद्युत्प्रवाहों के समान स्नायुओं के विद्युत्प्रवाहों का भी चित्रण किया जाता है। इस से ज्ञात होता है कि समाधि के समय स्नायुओं में कोई भी खास विद्युत्प्रवाह नहीं चलते।

समाधि से हृदयक्रिया पर बहुत थोड़ा परिणाम होता है। गहरे ध्यान से हृदय का स्पन्दन थोड़ा तेज होता है। वह समाधि में और भी तेज हो जाता है। समाधि उतरने पर वह जल्दी से कम होने लगता है।

निद्रावस्था में मस्तिष्क के विद्युत्प्रवाह तीन अवस्थाओं में बदलते हैं। (१) पहली अवस्था सुस्ती की है, इस अवस्था में जिन लोगों के मस्तिष्क में जागृतावस्था में अल्फा तरंग प्रधान रहते हैं उनके अल्फा तरंग कम हो जाते हैं, और जिनमें जागृत दशा में अल्फा तरंगों से शीघ्र-तर तरंग प्राय पाये जाते हैं उनमें जागृत दशा में अल्फा तरंग ज्यादा उठने लगते हैं। साधारणतः सुस्ती में मस्तिष्क तरंग मन्द होकर प्रति सेकेन्ड ४ या ५ बार लहराते हैं। (२) दूसरी अवस्था उंघने की या हल्की नींद की है। इस में प्रति सेकन्ड १४ या १५ लहरों वाले तरंग (मन्द बीटा तरंग) मस्तिष्क में उठते है। (३) तीसरी अवस्था गहरी नींद की। इस समय प्रति सेकन्ड $\frac{1}{2}$ से ३ तक लहरों वाले मस्तिष्क तरंग दिखाई देते हैं। अगर किसी को गहरी नींद से अकस्मात् जगाया तो क नाम के तरंग दिखाई देते हैं। यह तरग कुछ मन्द गति तरंगों के शिरो भाग पर अल्फा तरंग उद्भुत होने से सिद्ध होते हैं।

---

१. तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् यो. सू. वि. पा. सूत्र २

कोई लोग समझते हैं कि समाधि यद्यपि पामुर्त्य निद्रा के समान नहीं है मोह निद्रा (hipnosis) के समान अवश्य होगी। मनोवैज्ञानिक सूचनाएं देकर किसी को निद्रा सदृश्य अवस्था में डाल सकता है। इस अवस्था को मोहनिद्रा कहते हैं। इस मोहनिद्रा की अवस्था में मस्तिष्क के विद्युत्प्रवाह ठीक वैसे ही रहते हैं जैसे जाग्रतावस्था में। परन्तु समाधि में जागृति के प्रवाहों से भिन्न ही प्रवाह चलते हैं, यह उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है। अतः समाधि मोहनिद्रा से भिन्न अवस्था है।

शरीरज्ञों के मतानुसार कहा जा सकता है कि समाधि की अवस्था पूर्ण एकाग्रता की अवस्था है। क्योंकि पूर्ण एकाग्रता की अवस्था में मस्तिष्क में समाधि के सदृश ही विद्युत्प्रवाह चलते हैं।

असम्प्रज्ञात समाधि सिद्ध होने के पहले कई सीढ़ियां चढ़नी पड़ती हैं। पहले तो चित्त किसी स्थूल भौतिक पदार्थ पर ही स्थिर हो सकता है। ऐसे पदार्थ पर चित्त एकाग्र करने से सवितर्क समाधि होती है। सांख्य के मुताबिक भौतिक पदार्थों के सूक्ष्मःरूप तन्मात्र हैं। उनसे भी सूक्ष्म इंद्रियां और इंद्रियों से भी सूक्ष्म अहंकार है। इन एक से एक सूक्ष्म पदार्थों पर क्रमसे स्थिर करने से क्रमशः अविचार सानन्द, और सास्मित समाधियां सिद्ध होती हैं।[1] अहंकार को भी छोड़ने के बाद असम्प्रज्ञात समाधि सिद्ध होती है। जो क्लेशरहित है, कर्म के फल से जो बद्ध नहीं होता, वह निष्काम पुरुष ईश्वर कहलाता है। उसका ध्यान करने से भी असम्प्रज्ञात समाधि सिद्ध हो सकती है।[2] परन्तु असम्प्रज्ञात समाधि में भी कर्मों के संस्कार कायम रहते हैं। इनको भी नष्ट करने के लिये प्रकृति जैसे सूक्ष्म विषयों पर चित्त एकाग्र करके उसको निर्विचार बनाना चाहिए। विचार शब्द और अर्थ की सहायता से होता है। शब्दार्थ के सब विकल्प हटाने से चित्त निर्विचार होता है। ऐसे चित्त में ऋतम्भरा नाम की सत्यज्ञान कराने वाली प्रज्ञान उद्भूत होती है। ऋतम्भरा प्रज्ञा से संस्कारों का प्रतिरोध होता है। परन्तु ऋतम्भरा प्रज्ञा भी कुछ संस्कार उत्पन्न करती है। इन संस्कारों का भी निरोध होने पर निर्बीज समाधि सिद्ध होती है![3]

समाधि का ज्ञान मूल्य और नैतिक मूल्य

समाधि के अस्तित्व के बारे में बहुत मतभेद है। समाधि अस्तित्व में हो या न हो उसके बारे में एक बात ध्यान में रखनी चाहिए। वह यह है कि आधुनिक विज्ञान ने समाधि और योग की सिद्धियों का अस्तित्व साबित कर भी दिया तो भी उससे अध्यात्मवाद सिद्धि हो जायगा या जड़वाद असिद्ध हो जायगा, यह समझना भूल है। समाधि का अस्तित्व सिद्ध होने से समाधिजन्य ज्ञान का सत्यत्व सिद्ध नहीं होता, जैसे स्वप्न का अस्तित्व सिद्ध होने से स्वप्नगत पदार्थों के ज्ञान का सत्यत्व सिद्ध नहीं होता। ज्ञान का सत्यत्व सिद्ध करने का एक ही मार्ग है,

---

१. यो. द. स. पा. सू० १७ २. यो. द. स. पा. सू० २३
३. यो. द. स. पा. सू० ४२–५१

सत्यापन (Vorification)। एक ज्ञान का सत्यत्व सिद्ध करने के लिये दूसरे ज्ञानों से उसकी संगति स्थापित करनी पड़ती है। सूक्ष्मदर्शन से, उपकरणहीन आंखों को न दीखनेवाला कीटाणु दीख पड़ता है। परन्तु हम इस कीटाणु को तब तक सत्य नहीं मानते जब तक उसका अस्तित्व ज्ञान के अन्य साधनों से साबत नहीं होता। सूक्ष्मदर्शक से जिस में कालेर का कीटाणु दीख पड़ा उस पानी को पीने से कालरा होता है, जिस पानी में सूक्ष्मदर्शक की सहायता से कालरा का कीटाणु नहीं दीखता उसको पीने से कालरा नहीं होता, ऐसा हम अनुभव करते हैं। इस अनुभव से सूक्ष्मदर्शक जन्य ज्ञान का सत्यापन होता है। समाधि का अनुभव करने से 'प्रकृति से आत्मा भिन्न है,' यह ज्ञान होता है। इस ज्ञान का, सूक्ष्मदर्शक जन्य ज्ञान के समान सत्यापन उपलब्ध नहीं है। जब ऐसा वैज्ञानिक सत्यापन उपलब्ध हो जायगा तभी समाधि का प्रामाण्य स्थापित होगा।

जब तक समाधि का प्रामाण्य स्थापित नहीं होता तब तक समाधि के अस्तित्व मात्र से जड़वाद असिद्ध नहीं होता। समाधि का शरीर पर हुआ परिणाम और समाधिसिद्ध पुरुषों का आचरण, इनके आधार पर ही विज्ञान समाधि का अस्तित्व सिद्ध कर सकता है, उपर्युक्त मनोवैज्ञानिक अन्वेषणों से यह स्पष्ट है। अर्थात् इन अन्वेषणों से शरीर व्यतिरिक्त आत्मा सिद्ध नहीं हो सकता।

समाधि, यह ज्ञान का एक स्वतन्त्र साधन (प्रमाण) न भी माना गया हो तो भी समाधि के अनुभव का कुछ नैतिक मूल्य हो सकता है, यदि समाधि का अनुभव लेने से व्यक्ति नीतिवान बन जाता है। परन्तु समाधि सिद्ध पुरुष अन्य पुरुषों की अपेक्षा ज़्यादा नीतिवान रहता है, यह अभी तक किसी ने सिद्ध नहीं किया। समाधि का अनुभव लेने के बाद सत्यनिष्ठा, दूसरों का दुःख स्वयं अनुभव करने की क्षमता आदि नैतिक गुण पहले से ज्यादा परिमाण में दिखाई देते हैं, ऐसा स्थापित करने वाला कोई मनोवैज्ञानिक अन्वेषण उपलब्ध नहीं है। इसके बारे में भी अधिक खोज की आवश्यकता है।

योगदर्शन के अनुसार, समाधि मानसिक और शरीरिक साधनाओं से साध्य है, और उस से सांख्यका अभिमत कैवल्य प्राप्त होता है। परन्तु समाधि शब्द का प्रयोग इस से व्यापक अर्थ में भी होता है। वेदांती भी ब्रह्मसाक्षात्कार की अवस्था को समाधि कहते हैं।[1] अर्थात् अन्तिम सत्यों का साक्षात्-ज्ञान जिस अनुभव से होता है उस अनुभव को समाधि कहा जा सकता है। अंग्रेजी में मिस्टिक वीयन शब्द का प्रयोग होता है, मिस्टिक वीयन यह एक अन्तिम सत्य की ही अनुभूति है। इसी दृष्टि को साक्षात्कार कहते हैं। विल्यम जेम्स,[2] बर्टरण्ड रसेल[3] आदि दार्शनिकों ने साक्षात्कार के बारे में विचार प्रकट किये हैं। उनका कहना है कि साक्षात्कार

---

१. यः साक्षात्कुरुते समाधिषु परं ब्रह्म प्रमोदार्णवम्। श्री हर्ष, नैषधीय
२. Varieties of Religions Experieuce.
३. Religion and Science.

शब्द से जिन अनुभवों का वर्णन किया जाता है उन अनुभवों में बहुत सादृश्य है। यह सादृश्य इन बातों में है : (१) यह सब अनुभव आनन्दमय होते हैं। (२) वे अंतिम सत्य को अद्वैत रूप में (Monistic) देखते हैं। (३) उन से देश- कालबद्ध जगत् मिथ्या प्रतीत होता है–इत्यादि।

योगदर्शन की 'समाधी' में भी यह विशेष पाये जाते हैं :– (१) समाधि से सब क्लेश नष्ट हो जाते हैं।[1] क्लेशहीन होने पर भी समाधि पत्थर के समान निश्चेतन अवस्था नहीं है। इस लिये समाधि को आनन्दमय कहा जा सकता है। (२) समाधि में आत्मा आत्मरूप से ही रहता है। उस को और किसी का भान नहीं रहता, इस लिए उस में सत्य का एक रूप से ही दर्शन होता है।[2] (३) स्थल और काल यह सांख्य दर्शन के मुताबिक प्रकृति के खेल हैं। शुद्ध आत्मदर्शन में उनका इस लिए जगन्मिथ्यात्व प्रतीति[3]यह विशेष भी समाधि में विद्यमान है।

प्राणायाम और सिद्धियाँ:-

योगसाधना ठीक तरह से होने के लिये योगदर्शन में अहिंसा-सत्य आदि नैतिक आचरण, और प्राणायाम तथा आसन आदि व्यायाम आवश्यक मानेगये हैं। आधुनिक विज्ञान के अनुसार यह व्यायाम स्वास्थ्यकर है या नहीं, इसके बारे में मतभेद है। परन्तु प्राणायाम सहित सूर्य–नमस्कार चित्त को प्रसन्न बनाते हैं, ऐसा मेरा अनुभव है। यौगिक व्यायामों के बारे में वैज्ञानिक अन्वेषण बहुत आवश्यक है। प्राणायाम के बारे में सर्व श्री गुण्डुराव, कृष्ण स्वामी, नरसिंह, होनिंग और गोविन्दस्वामी इनके अन्वेषण पत्र[4] महत्वपूर्ण हैं। उसके फलित निम्नलिखित हैं:–

एक प्रयोग श्री कृष्ण अय्यंगार नामक योगी पर किया गया था। यह योगी ढाई फुट चौड़े, तीन फुट लम्बे और चार फुट गहरे खड्डे में ६ घंटे तक बन्द रहा। खड्डा १ इंच मोटे तख्ते से बन्द किया गया था। इस अवस्था में योगी के मस्तिष्क में विद्युत्प्रवाह,श्वासोच्छ्वास,हृदय–क्रिया आदि नापने का प्रबन्ध किया गया था। इस से पता चला कि योगी के मस्तिष्क में विद्युत्प्रवाह ठीक वैसे ही थे जैसे साधारण अवस्था में रहते हैं। उसका श्वासोच्छ्वास बिल्कुल धीरे, कभी कभी १मिनट में एक दफा चलता था। हृदय क्रिया साधारण अवस्था के समान ही चलती रही। ६ घंटे के बाद खड्डे में कर्बाम्ल वायु केवल ३, ८ प्रतिशत था। अगर साधारण परिमाण में श्वासोच्छ्वास चलता रहे तो इससे कई गुणा ज्यादा कर्बाम्ल वायु खड्डे में भर जायगा।

इस प्रयोग से कहा जा सकता है कि योगी अपने श्वासच्छ्वास पर बहुत नियन्त्रण रख सकता था।

१, यो. द. कै. पा. सू. ३०। २. यो. द. स. पा. सू. ३।
३. यो. द. कै. पा. सू. ४।
४. Journal of the All India Institute of Mental Health, Bengalore vol. I No. 2 July 58.

योगसाधना से कई सिद्धियां प्राप्त होती हैं, जैसे शरीर अणुतुल्य करना, शरीर पर्वताकार करना इत्यादि, ऐसा कहा जाता है। योगदर्शन में भी इन सिद्धियों का वर्णन है। क्या सचमुच यह सिद्धियाँ योग से प्राप्त होती हैं? या यह केवल गप्पें हैं? या यह कुछ जादू का प्रकार है? इन प्रश्नों का विज्ञानसिद्ध उत्तर आज नहीं दिया जा सकता।

सूक्ष्म, व्यवहित याने ढके हुए, और विप्रकृष्ट, याने अति दूर पदार्थों का ज्ञान योगी को होता है, ऐसा योगसूत्र कहता है।[1] ऐसे ज्ञान को अतीन्द्रिय प्रत्यक्ष कहते हैं। राइन नामक मनोवैज्ञानिक के प्रयोगों में कुछ व्यक्तियों को ऐसा ज्ञान साध्य है, इसके बारे में कुछ प्रमाण मिलता है। ड्यूक विद्यापीठ में ह्यूवर्ट पीअर्स नामक व्यक्ति पर प्रयोग किया गया। पीअर्स अतीन्द्रियदर्शी समझा जाता था। उसको एक कमरे में बैठाया गया। पास के दूसरे कमरे में डा० प्राट नामक विद्वान बैठे थे। उनके सामने, जिन पर विविध आकृतियां खींची गई हैं, ऐसे अनेक पत्ते थे। तीस तीस सेकण्डों के बाद में प्रो० प्राट उन पत्तों में से एक पत्ता उठा कर अलग रखते थे। इसी वक्त अलग कमरे में बैठा पीअर्स उस पत्ते पर कौनसी आकृति है, इसके बारे में अपना अंदाजा एक कागज पर लिखता था। इसी प्रकार से कई पत्ते उठाये गये और उन पर क्या आकृति है, इसके बारे में अपने अंदाज पीअर्स ने लिखे। प्रयोग के अन्त में डा० प्राट के उठाये कार्ड और पीअर्स के लिखे अंदाज राइन के सुपुर्द किये गये। राइन ने पीअर्स के अंदाजों की पड़ताल की, जिस से पता लगा कि पीअर्स के सौ में ३५ अन्दाज सही थे। इस से कहा जा सकता है कि पीअर्स कुछ हद तक अतीन्द्रियदर्शी था।

अतीन्द्रिय प्रत्यक्ष माना भी गया तो भी वह योगसाधना से प्राप्त होता है, इसके बारे में आधुनिक मनोविज्ञान में कोई प्रमाण नहीं मिलता! पीअर्स जैसे व्यक्तियों में अतीन्द्रियदर्शिता स्वभावतः थी, योगसाधना से सिद्ध नहीं हुई थी।

योग और मनोविश्लेषणः-

आधुनिक मनोविश्लेषण से योगशास्त्र का समर्थन होता है, ऐसा डा० चटर्जी, दत्त आदि विद्वानों का कहना है।[2] सूचनाओं से शरीर की उन क्रियाओं पर भी परिणाम किया जा सकता है जो साधारणतः इच्छाधीन नहीं रहतीं, ऐसा मनोविश्लेषण मानता है। बिना किसी व्याधि के अगर किसी के शरीर पर फोड़े आते हैं, तो उसको मोहित कर मनोविश्लेषण सूचना देता है कि 'अब तेरे शरीर पर फोड़े नहीं आयेंगे'। इस सूचना से सच ही शरीर पर फोड़े आना बन्द होता है, ऐसा मनोविश्लेषक कहते हैं। पसीना, आँसू आदि क्रिया साधारण लोगों के लिये, इच्छाधीन नहीं, केवल इच्छा करने से कोई आँसू या पसीना नहीं बहा सकता। परन्तु कुशल नट इच्छापूर्वक पसीना या आँसू बहा सकता है। अर्थात् अभ्यास से इच्छाबल का क्षेत्र बढ़ाया जा सकता है। योगी का खुद के शरीर पर जो पूरा स्वामित्व रहता है उसकी उपपत्ति

---

१. यो. द. वि. पा. सू. २५

२. Introduction to Indian Philosophy.

इसी तत्त्व के आधार पर दी जाती है।

परन्तु इसकी एक निश्चित मर्यादा है। अभ्यास से शरीर को वही क्रिया इच्छाधीन हो सकती है जो शरीर में प्रायः चलती है। आँसू या पसीना बहना यह क्रियाएं शरीर की स्वाभाविक क्रियाएं है। यह ऐसी क्रियाएं नहीं हैं जो शरीर में होती ही नहीं। परन्तु शरीर अणुरूप या पर्वताकार होना यह क्रियाएं कभी शरीर में दिखाई नहीं देती। जो क्रियाएं शरीर में कभी होती ही नहीं वह भी अभ्यास से इच्छापूर्वक उत्पन्न की जा सकती हैं, यह बात मनोविज्ञान के आधार पर नहीं सिद्ध होती।

इस निबन्ध के फलित निम्नलिखित हैं :–

(१) समाधि यह साधारण अवस्थाओं से भिन्न मानसिक एकाग्रता की अवस्था है।

(२) वह अन्य साक्षात्कारों से भिन्न नहीं है।

(३) उसका ज्ञानमूल्य और नैतिकमूल्य सिद्ध नहीं हुआ है।

(४) योग की सिद्धियों के बारे में अभी तक विज्ञान सिद्ध प्रमाण नहीं मिले।